International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: (RJIF 5.22)
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue1; January 2016; Page No. 60-62

'शिव चरित मानस' में' भक्ति–भावना

प्रीति
हिन्दी विभाग, हिन्दू कन्या महाविद्यालय, सीतापुर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
आलोच्य ग्रन्थ श्री शिवचरित मानस उत्तर–प्रदेश के सीतापुर जनपद (पश्चिमी अवधी–क्षेत्र) के कवि डॉ0 रमेश मंगल बाजपेयी द्वारा अवधी भाषा में प्रणीत तथा शिव भक्ति – भाव से मण्डित है। ग्रन्थ में कवि ने शिव – पुराण की कथाओं तथा अन्य स्रोतों से प्राप्त शिव–तत्त्व विषयक ज्ञान, आध्यात्मिक चिन्तन व व्यावहारिक नीतिगत कथ्य को अत्यन्त कुशलता से सम्पृक्त करके अपनी मौलिक उद्भावनाओं के साथ प्रबन्ध काव्य के ताने–बाने में संग्रथित किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ पाँच पर्वों में विभक्त है तथा राम चरित मानस की भाँति दोहा–चौपाई–शैली में विरचित है। शिव और शक्ति का अखण्ड अभेद रूप ही सचराचर जगत में परमानन्द का कारण है, किन्तु माया के कारण जगत में भेद दृष्टिगत होता है। भक्ति – भावना से ही माया को दूर किया जा सकता है। प्रस्तुत शोध–पत्र का लक्ष्य ग्रन्थ में अभिव्यक्त इसी भक्ति–भाव का प्रतिपादन है।

मूल शब्दः सदाशिव, शिवा, द्वैताद्वैत, अर्द्धनारीश्वर, नाद, प्रणव, नटराज।

प्रस्तावना

डॉ0 रमेश मंगल बाजपेयी प्रणीत काव्यकृति 'श्री शिव चरित मानस' अवधी प्रबन्ध काव्यों के क्रम में एक उल्लेखनीय कृति है। डॉ0 विश्वनाथ याज्ञिक के अनुसार ''श्री राम चरित मानस के अनुकरण में अवधी भाषा व दोहा–चौपाई–छन्द आदि में विरचित यह भाव–प्रणव ग्रन्थ, अध्यात्म की प्रीति–प्रतीति से संश्लिष्ट है। जहाँ आराध्य का आराधन, सच्चिदानन्द तत्त्व है और जहाँ सत्यम्–शिवम्–सुन्दरम् की त्रयी का सहप्रवर्धन अविकाम्य बना है।'' यहाँ ये तथ्य प्राथमिकता से स्पष्ट है कि सुकृति ''श्री शिव चरित मानस'' का प्रणयन अवधी विभाषा में उसे काव्य प्रबन्ध का रूप देते हुए गोस्वामी तुलसीदास के विश्व विख्यात ग्रन्थ ''राम चरित मानस'' का अनुकरण करते हुए किया गया है। ध्यातव्य है कि रचनाकार डॉ0 बाजपेयी जी अवधी के प्रमुख भू–भाग, जनपद–सीतापुर के निवासी हैं। जहाँ बोली के रूप में पश्चिमी–अवधी का प्रचलन है। भगवान सदाशिव रचनाकार के आराध्य हैं और उनकी शिव भक्ति को सत्तेज करते हुए रचनाकार के सदगुरु ने उन्हें शिव–काव्य सृजन की प्रेरणा दी है।

कवि ने सगुण भक्ति के तत्त्वावधान में 'द्ववैता–द्वैत सिद्धान्त को मान्यता प्रदान करते हुए शिव को अपना इष्ट माना है। जिसके अनुसार–'शव' (निष्प्राण–निर्गुण–पुरुष आदि) में प्रथम या सक्रिय अवस्था होकर 'इ' की मात्रा अर्थात् इकार (स्त्रीलिंग–प्रकृति या आदि शक्ति) के संयुक्त होने से – सगुण या प्राणवान ब्रह्म–सदृश पहचाना गया 'शिव'। परस्पर पूरक या सकल द्वन्द्व में एक, उदासीन (पुरुष–ब्रह्म) तो दूसरा उसका पूरक–उत्प्रेरक (आदिशक्ति/प्रकृति या ऊर्जा तत्त्व), जो अन्ततः अभेद एक और अखण्ड है। वह इकार ही 'शिव' की कल्याणकारी और बोध कारक प्रकृति है यथा –

''सिवा सक्ति उस सिउ को जानौ। सिवा बिना सिउ सव सम मानौ।।''

–श्री शिवचरितमानस, आदि पर्व।

सकल द्वन्द्व के परस्पर पूरक, अपृथक् रूप से कभी भी पूर्ण नहीं। उनका परस्पर संयुक्त (अखण्ड) रूप ही पूर्ण है। यह पूर्णता ही सच्चिदानन्द स्वरूप है। पूर्ण को पूरकों में पृथक–पृथक मान्यता देना, भेद–बुद्धि या माया है। इस भेद बुद्धि से रहित ज्ञान ही अद्वैत को पाने का पथ है। जैसे परम–पुरुष और परम–प्रकृति, अभेद होकर (अद्वैत) परब्रह्म स्वरूप है, उसी प्रकार परमात्मा और उसके अंश रूपी जीवात्मा, अभेद होने पर भी भेद बुद्धि कौन कहे ? शिव कैसा है, इसी द्वैत भाव को ग्रन्थ में स्थिर करते हुए भक्ति–तत्त्व को पुष्ट किया गया है। यथा–

''आदि देव सिव देव बखाने। द्वैताद्वैत चरित प्रगटाने।''

–श्री शिवचरितमानस, आदि पर्व।

अर्थात् वेद वर्णित शिव आदि देव हैं। यही सोह•म् है, यही शिवो•हम् है और यही है तत्त्वमसि का भाव। ग्रन्थ में शिव और शिवा के अनुसार अखण्ड और अभेद रूप को 'अर्द्धनारीश्वर' रूप में व्यक्त करते हुए, उनकी सुगन्ध के समान अक्षत और अनुपम माना गया है–

''पुहुप बास जिमि अछत अनूपा। तिमि सिव–सिवा अखण्ड सरूपा।।''

राजत अरुन कपूर रंग, सिवा–संभु सम्पृक्त।
बिनवौ अरधु – नरीसुरहि, गिरा–अरथु अबिभक्त।। दोहा–11क
जहाँ पुरुष जनि नारि कोउ, प्रकति न कौनिउ द्वन्द्व।

सोइ सिवोहम तत्तुमसि, ब्रह्म सच्चिदानन्द।। दोहा–11ख
ज्ञान रूप सिउ धारि उर, भगति रूप जुत काज।

भेद भीति–माया गहउ, परमानन्द सुराज।। दोहा–11ग परमानन्द सरूप सत, अरध नरीसुर रूप।

निरगुन मानउ व्यक्त हुइ, भा साकार सरूप।। दोहा–11घ

–श्री शिव चरित मानस, आदि पर्व।

अर्थात्–''अरुण वर्णी शिवा और धवल वर्णी शम्भु सम्पृक्त रूप से वाणी और अर्थ की भाँति विराज रहे हैं। ऐसे ''अर्द्धनारीश्वर'' स्वरूप की वन्दना करता हूँ।'' ध्यातव्य है कि अरुण (लाल) वर्ण सौभाग्य सूचक है तथा धवलवर्ण (श्वेत वर्ण) संन्यास, विराग अथवा अध्यात्म का सूचक है। जिनकी सम्पृक्त (अभेद) स्थिति (मिलने) से गुलाबी वर्ण उत्पन्न होता है, जो आनन्द (परमानन्द) का द्योतक है। ऐसा परमानन्दी अर्द्धनारीश्वर स्वरूप, जो शब्द और उससे अभिव्यक्त अर्थ की भाँति है, उसकी मैं वन्दना करता हूँ। एतत् नाद–ब्रह्म (प्रणव) को अर्द्धनारीश्वर के अलौलिक (निराकार) रूप से इंगित किया गया है।

जहाँ जीवात्मा में पुरुष और नारी या प्रकृति–विकृति आदि का बोध समाप्त हो जाता है, तभी उसे स्वयं–शिव–विभुता, ब्रह्म और सत्–चित–आनन्द का भाव होने लगता है, क्योंकि परमात्मा अभेद, अलिंगी और अद्‌भुत है। जीवात्मा उसी स्थिति में पहुँच कर उसके समान हो जाता है।

शिव ज्ञान को हृदय में धारण कर भक्ति रूपी कर्म को करना चाहिए, माया की दीवार भेद कर ही परमानन्द को प्राप्त किया जा सकता है। अर्थात् शिव को हृदय में बसा कर, उसी के निमित्त प्रीतिपूर्वक कार्य करने से सुगमता पूर्वक माया से मुक्ति मिलती है और ब्रह्मानन्द की प्राप्ति होती है। ध्यातव्य है यहाँ शिव, ज्ञान रूप से; भक्ति शिवा रूप से कही गयी हैं। वो अर्द्धनारीश्वर रूप ही परमानन्द और सत्य स्वरूप है। मानो निराकार (सच्चिदानन्द) रूप, अर्द्धनारीश्वर स्वरूप में साकार (व्यक्त) हुआ है। भगवान सदा शिव का यह अर्द्धनारीश्वर स्वरूप द्वैता–द्वैत भाव की परम प्रतिष्ठा है। शिव के लिंग स्वरूप, नटराज स्वरूप और नादस्वरूप आदि सभी स्वरूपों में क्रमशः प्रकृति, लास्य, अर्थ आदि संयुक्त शक्ति के स्वरूप, अनन्त शिव के अर्द्धनारीश्वर या द्वैता–द्वैत भाव को प्रकट करते हैं।

स्पष्ट है, महेश्वर निराकर 'निष्कल' शिव चिह्न रहित है। उसमें स्थिति आदि शक्ति अथवा आदि प्रकृति की प्रधानता से ही शिव की सगुणता या लिंग (चिह्न) की उत्पत्ति होती है। श्री लिंग स्वरूप में सदैव शिव–शिवा अभेद रूप में रहते हैं यथा श्री सोमनाथ ज्योतिर्लिंग के पावन स्वरूप में भगवान शिव और उनकी आदि शक्ति अखण्ड रूप से ही सदैव विराजती हैं।

भगवान शंकर नाट्य के आद्य–प्रवर्तक हैं और इस प्रवर्तना के अवसर पर वे नटराज के नाम से अभिहित किये जाते हैं। एतत् 'नटराज' भगवान शिव का ही एक विशिष्ट रूप है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही नटराज की नृत्यशाला है। उनका नृत्य प्रारम्भ होता है, तब उनके नृत्य झंकार से समग्र विश्व–व्यापार मुखर और गतिशील हो उठता है तथा जब नृत्य विराम होता है, तब समस्त चराचर जगत शान्त और आत्मानन्द में निमग्न हो उठता है। नटराज का नृत्य ही सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव और अनुग्रह इन पंच महाभावों (ईश्वरीय क्रियाओं) का द्योतक है। यथा–शिव महिम्न स्तोत्र में आचार्य पुष्पदन्त ने कहा है – ''जगद्रक्षायै त्वंनरसि ननु वामैव विभुता।''

शिव को संयत करने हेतु भगवती पार्वती का लास्य है। ताण्डव रस–भाव से वर्जित है और लास्य रस–भाव से समन्वित। इसी ताण्डव एवं लास्य के सामंजस्य से सृष्टि प्रपंच का विस्तार हुआ है। यथा–अर्द्धनारीश्वर स्तोत्र में सृष्टि प्रपंच के आदि कारक 'भव' और 'भवानी' को नमन करते हुए कहा है :–

''प्रपंच सृष्टयुन्मुख लास्य कायै, समस्त संहारक ताण्डवाय।
जगजनन्यै जगदेक पित्रये, नमः शिवायै च नमः शिवाय।।''

उपर्युक्त द्वैता–द्वैत भाव का 'श्री शिव चरित मानस' के आदि पर्व में भक्ति पूर्वक परमप्रकृति (शिवा) के रूप में, उनके संयुक्त प्रयास (ताण्डव व लास्य) का सरल बोध कराया गया है –

''प्रकति नारि तनु धारई, होय पुरुष संजुक्त।

अरध नरीसुर रूप सोइ, सिवा–संभु से जुक्त।। दोहा–17क, आदि पर्व

''परम पुरुष सिव आदि नट, स्रिष्टि रचै मन होय।

लास्येसुरि हुइ पारबति, सिउ–पूरक नित सोय।। दोहा–17ख, आदि पर्व

जबु–जबु सिव कै ताण्डव होई। सिवा लास्य ठानै पुनि सोई।।
तबु तबु होय स्रिष्टि कै रचना। जानहु सत्य बेदु बुधि बचना।।

ताण्डव लास्य बन्द जबु होई। स्रिष्टि कलाप बन्द सब सोई।।
प्रकृति–पुरुष संजोग वियोगा। स्रिष्टि प्रलै मानइँ बुधि लोगा।।

ताण्डव लास्य मिलन सुचि जोगा। प्राकृत ब्रह्म कलाप नियोगा।।
सुफल स्रिजन सब विधि सर तासू। प्रगट चिताचित द्वन्द्व प्रकासू।।

सोइ प्राकृत संजोग वियोगू। विघटित द्वन्द्व सान्त सब भोगू।।
इच्छा परम पुरुष जस होई। प्रकति देखाव भाव सोइ–सोई।।

–श्री शिव चरित मानस, आदि पर्व।

शिव और शिवा का एक सम्पृक्त निराकार स्वरूप 'नाद' है। आलोच्य ग्रन्थ में उत्तर–पर्व के मंगलाशासन में कहा गया है –

''चिदाकाशऽनन्ताय, सदाशिवाय शिवात्मने।
ओंकाराय नादाय, शब्द रूपाय नमो नमः।।''

–उत्तर पर्व, मंगलाचरण–श्लोक 3

''अर्थात् चिदाकाश, अनन्त, सदाशिव, शिवात्मा, ओंकार, नाद और शब्द रूप शिव को नमस्कार है।'' इस प्रकार नाद शब्द रूप शिव का अनन्त एवं प्रणव स्वरूप व्यक्त किया गया है। महर्षि अरविन्द ने शिव को परिभाषित करते हुए कहा कि ''ब्रह्म अमर है, विष्णु सनातन है और शिव अनन्त है।'' अनन्त आकाश को कहा गया है, जिसे सृष्टि क्रम में पहचाना गया। शिवात्मा ने अपने ही स्वरूप (अनन्त–आकाश) का बोध कराया –

''आतमनः आकाश संभूतः।''

इस अनन्त आकाश का अपना परम्परागत गुण 'नाद' है यह नाद अथवा प्रणव (शब्द, वाणी या विद्या का बीज रूप ऊँ) ओंकार ही शिव तत्त्व है। इस शिव तत्त्व शब्द में अखण्ड रूप से अर्थ की व्याप्ति है। यथा –

''सुनु सुत कहौ तोहि समुझाई। प्रनौ बीजु सिउ–तत्तुहिं गाई।।''
केवल प्रनौ सुनत नर होई। सिउ सम साच्छात नर सोई।।

अर्थु प्रनौ मंत्रहि जिनु जाना। होहि सकल तेहि नर सिउ ज्ञाना।।''
प्रनौ सकल बिद्या सदा, रहइ बीजु कइ रूप।
अति सूच्छम अरथहिं गहन, जानहु लल्लु अनूप।।2।।
उत्तर–पर्व
प्रनौ सर्ब–व्यापक सिउ रूपा। सर्व प्रथमु सोइ रहइ अनूपा।।
सिव अरु प्रनौ सदाहिं अभेदा। वाचक वाच्यहिं को नहिं भेदा।।

सबु कइ कारन प्रनौ सदाई। निरगुन परमेसुर कहलाई।।
पावइं मुकुति जीव सबु कासी। पाए प्रनौ मंत्रु अघनासी।।
दोहा–2,
–श्री शिव चरित मानस–उत्तर–पर्व

प्रणव या नाद–शिव विषयक उपर्युक्त सूचनाओं को 'श्री शिव चरित मानस' में यथा अवसर वर्णित किया गया है। इस वर्णन में अर्द्धनारीश्वर के प्रति भक्ति भाव या द्वैता–द्वैत दृष्टि ही प्रधान है (अर्थ प्रनौमंत्रहिं जिन जाना। होहि सकल तेहि नर सिउ ज्ञान।।'')। प्रणव मंत्र (बीज 'ऊँ' अथवा 'नमः शिवाय' मंत्र) का अर्थ जिन्होंने जान लिया है, उन्हें शिव–तत्त्व का स्वयमेव ज्ञान हो जाता है। इससे 'वाणी' और उसका 'अर्थ' भी ध्वनित होता है, जिसे महाकवि कालिदास ने जगत् पिता शिव और जगन्माता पार्वती का अखण्ड सम्पृक्त रूप मानकर उसे प्रणाम किया है–

''वागार्थाविव सम्पृक्तौ वागार्थ प्रतिपत्तयै।
जगतः पितरौ बन्दे पार्वती – परमेश्वरौ।।''

एतत् कवि ने द्वैत से अद्वैत की प्राप्ति की सर्वोपरि मान्यता देते हुए साम्ब सदाशिव के सम्पृक्त स्वरूप (अर्द्धनारीश्वर) की भाव–प्रवण अर्चना की है तथा इसी परम–भाव को सदाशिव के एकाधिक विग्रहों पर केन्द्रित करते हुए भक्ति पूर्वक गायन किया है। शिव चरित मानस में आध्यात्मिक चिन्तन से संयुक्त होकर काव्य की सरस अभिव्यक्ति के साथ धर्म का वीतरागी कोण है। ग्रन्थ में शिव–भक्ति की उत्ताल–तरंग जनमानस को सुगमता से अभिभूत करने में समर्थ है। शिव–पुराण के अनुरूप ग्रन्थ में शिव के प्रणव–स्वरूप का वर्णन स्पष्ट और विधिवत है। मंगलाशासन में न्यस्त कवि की समर्पिता भक्ति, भावों के उत्तुंग–शिखर पर पहुँचा कर रस–वर्णन करती है –

''अखिल लोक ब्रह्मांड सब, सादर करउँ प्रनाम।
पुनि–पुनि बन्दउँ संभु ह्रद, जहाँ बसे श्री राम।।''

ग्रन्थगत भाव–वैशिष्ट्य के आकलन में भगवान सदाशिव के प्रति सर्वोच्च समर्पिता भक्ति के भाव तथा उसके पश्चात समन्वय की दृष्टि भी ध्यातव्य है। निर्गुण और सगुण भक्तों के मध्य समन्वय की स्थापना करते हुए कवि की मान्यता है –

''परमानन्द सरूप सत, अरध नरीसुर रूप।
निरगुन मानौ व्यक्त हुइ, भा साकार सरूप।। आदि पर्व, दोहा–11 घ

इसी प्रकार शैव–वैष्णव के समन्वयार्थ उल्लिखित है –

''ध्याता ध्येय भेद नहिं, ज्ञान पार नहिं पाय।
राम सिवहिं सिव राम कइ, ध्यान करहिं चित लाय।।'' आदि पर्व, दोहा – 3ख

महामंत्र सिव जपत सदाहीं। राम बसे सिव के उर मांही।।
सिव के भजन करै जो कोई। राम भगति नर पावै सोई।। आदि पर्व, दोहा–5ग/4–5

कवि की समन्वयवादी चेष्टा, उसकी एको–ब्रह्म की पुष्ट धारणा से प्रसूत हुई है। जिनके चलते कवि ने राम–शिव–कृष्ण अथवा ब्रह्मा–विष्णु–महेश की एकरूपता का वर्णन भली–भाँति किया है यथा –

''राम सम्भु माधव सकल, एक रूप भगवान।
भरमइ नर निज मोह बस, माया प्रबलु महान।।'' आदि पर्व, दोहा–6

''ब्रह्म बिस्नु सिवहिं नहि भेदा। प्रनवाच्छर महुँ गावत बेदा।।''
ग्रन्थ का मूल प्रतिपाद्य साम्ब सदाशिव की परमलीला पर केन्द्रित है।

जो शाक्तों और शैवों को समान रूप से अद्वैत दर्शन की और उन्मुख करता है –

''सिव अरु सक्ती परम सिव, परम तत्वु दुइ रूप।
सिव कूटस्थ तत्व अरु, सकति तबहि फल रूप।।'' आदि पर्व, दोहा–14

भक्ति और ज्ञान में समन्वय करते हुए ग्रन्थ में यह भी कहा गया है कि वेदपति शम्भु ज्ञान और भक्ति को समान रूप से मानते हैं। भक्तगण शिव भक्ति में परम सुख अनुभव करते हैं। और शिव भक्ति से ही ज्ञान की प्राप्ति होती है।
संक्षेप में, 'श्री शिव चरित मानस' ग्रन्थ की भाव भूमि भक्ति रस से आप्लावित तथा समत्व भाव से भली भाँति–भावित है। भक्ति रस के अन्तर्गत भावानुरूप श्रृंगार, शान्ति, वात्सल्य, सख्य, हास्य या करुणादिक अनुभूतियाँ आस्वादक के मन में यथा अवसर उपस्थित रहती हैं तथा काव्यानन्द या ब्रह्मानन्द की अनुभूति कराती हैं। द्वितीयतः, भवगद, भक्ति अपने इष्ट को पूर्णतया समर्पित होती है। इस समर्पण की परिधि इतनी व्यापक और विस्तृत हो जाती है कि भक्त को– ''हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम से प्रगट होहिं मैं जाना।'' –की दृष्टि प्राप्त हो जाती है। यहीं से समन्वय की विराट चेष्टा प्रारम्भ होती है और उदात्त भावों को विस्तार मिलता है, एतत् ग्रन्थ का भाव पक्ष भक्ति को पर्याप्त ऊचाईयाँ प्रदान करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. श्री शिव चरित मानस – डॉ0 रमेश मंगल बाजपेयी, प्रथम संस्करण , 1996 ई0।
2. अवधी काव्यधारा – डॉ0 श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप'।
3. श्री रामचरितमानस –गो0 तुलसीदास–गीता प्रेस, गोरखपुर।
4. श्री शिवपुराण (कल्याण विशेषांक)–गीता प्रेस, गोरखपुर।
5. श्रीमद् भगवद्गीता –गीता प्रेस, गोरखपुर।
6. शिव–महिम्न स्तोत्र –आचार्य पुष्पदंत ।
7. वेदान्त दर्शन – गीता प्रेस, गोरखपुर।
8. शिव– रामाष्टक – स्तोत्र (व्यासविरचित) – गीता प्रेस, गोरखपुर।
9. अर्द्धनारीश्वर स्तोत्र (स्तोत्र रत्नावली) – गीता प्रेस, गोरखपुर।